संविधान की प्रस्तावना में संशोधन पर निर्णय

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान की संशोधित प्रस्तावना में देश के 'धर्मनिरपेक्ष' और 'समाजवादी' स्वरूप पर सवाल उठाए जाने के प्रयास को खारिज कर दिया है। यह प्रयास दक्षिणपंथी वर्ग लंबे समय से करता रहा है।

न्यायालय का यह कदम सही क्यों है ?

- संविधान निर्माताओं ने संविधान में कानून के समक्ष समानता और सभी वर्गों के साथ समान व्यवहार पर जोर दिया है।

- इसके चलते मौलिक अधिकारों के अंतर्गत किसी भी धर्म को मानने, उसका पालन करने, और उसका प्रचार करने की स्वतंत्रता दी गई है। विश्वास और विवेक की स्वतंत्रता को भी इसमे शामिल किया गया है। यह संविधान का धर्मनिरपेक्ष स्वरूप है।

- न्यायालय ने एस.आर. बोम्मई (1994) मामले में फैसला दिया था कि धर्मनिरपेक्षता संविधान की बुनियादी विशेषता है।

- हाल की न्यायालय की व्याख्या में कहा गया है कि धर्मनिरपेक्षता में 'देश न तो किसी धर्म का समर्थन करता है, और न ही किसी आस्था के पालन और अभ्यास को दंडित करता है।

- इसी तरह 'समाजवाद शब्द' आर्थिक और सामाजिक न्याय के सिद्धांत को दर्शाता है, जिसमें देश यह सुनिश्चित करता है कि कोई भी नागरिक आर्थिक या सामाजिक परिस्थितियों के कारण वंचित न हो।

- 'समाजवादी' शब्द को डॉ. अंबेडकर ने आर्थिक नीति के संदर्भ में यह कहकर शामिल करने का विरोध किया था कि संविधान सभा को भविष्य की पीढ़ियों को किसी विशेष प्रकार की अर्थव्यवस्था से नहीं बांधना चाहिए। 'समाजवादी' शब्द को 42वें संशोधन के माध्यम से जोड़ा गया। हालांकि प्रस्तावना में इसकी उपस्थिति ने अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में खुले बाजार प्रतिस्पर्धा से जुड़ी नीतियों की बनाने में कोई बाधा नहीं डाली है।

संविधान अपने अस्तित्व के 75 वर्ष पूरे कर रहा है। 'धर्मनिरपेक्षता' और 'समाजवादी' शब्दों को बनाए रखने का निर्णय मौलिक विशेषताओं की समय पर पुनरावृत्ति हैं।

'द हिंदू' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित। 27 नवंबर 2024